E-ISSN: 2583-9667
Indexed Journal
Peer Reviewed Journal
https://multiresearchjournal.theviews.in

Received: 01-10-2024
Accepted: 07-11-2024

INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCE RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY

Volume 3; Issue 1; 2025; Page No. 01-04

सूर के पदों की गेयताः सूर संगीत

डॉ. पंकज उप्रेती

प्रभारी संगीत विभाग, राजकीय महाविद्यालय टनकपुर जिला चम्पावत, उत्तराखण्ड, भारत

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.14598537

Corresponding Author: डॉ. पंकज उप्रेती

सारांश

साहित्य और संगीत का गहरा सम्बन्ध है, जो प्राचीन काल से चला आ रहा है। साहित्य बिना संगीत के अधूरा लगता है, और यह विशेष रूप से वेदों और उपनिषदों में देखा जाता है। वेदों में 'उद्गीथ' का उल्लेख किया गया है, जो संगीत के गहरे तत्वों को दर्शाता है। भक्ति साहित्य और संगीत में भी गहरे रिश्ते हैं, जैसे सूरदास के पदों में गेयता और संगीत का अनिवार्य स्थान है। सूरदास की रचनाओं में गेयता का समावेश उनकी भावनाओं और कला के उत्सर्जन के रूप में देखा जा सकता है। यह अध्ययन साहित्य और संगीत के संयोजन, विशेषकर गेयता के महत्व और सूरदास के संगीतात्मक काव्य के बारे में जानकारी प्रदान करता है।

मूल शब्दः संगीत, गेयता, सूरदास, भक्ति, राग, वेद, उपनिषद, प्रणव, संगीत तत्त्व, भक्ति काव्य, सूर संगीत, गायक, रचनाएँ, काव्य कला, संगीतज्ञ

प्रस्तावना

साहित्य और संगीत का सम्बन्ध तो उनके जन्म से ही है। बिना संगीत तत्त्व का साहित्य अधूरा लगता हे। वेदों और उपनिषदों में 'उद्गीथ' शब्द का उल्लेख है। 'छान्दोग्य उपनिषद' में 'उद्गीथ' के महत्व पर प्रकाश डाला गया है। जितना कुछ गेय काव्य साहित्य या संगीत है सब प्रणव ओंकार है और जो ओंकार है वह सब गेय अर्थात गाने की वस्तु है। सृष्टि के आरम्भ में इस प्रणव को ही गाया गया। ओ–ओ–ओ–म यही उस आदि कवि ने गाया।[1] ऋगवेद की उषा विषयक ऋचाएं विशेषकर गीतात्मक हैं। उनमें सुकुमारता के दर्शन होते हैं। गाथा शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग ऋगवेद में हुआ है। उस समय गाथा गाने की परम्परा रही थी। डॉ.बासुदेव शरण अग्रवाल कहते हैं– 'ऋगवेद की कविता पर्वत से ऊँची चोटियों और नीची तलहटियों में विचरती हुई कभी ऊँचे सृष्टि विज्ञान से हमारा परिचय कराती है। कभी लोक जीवन के जाने पहचाने चित्रों को सामने लाकर खड़ा करती है।'[2] वर्षों की इस परम्परा के परम्परा के बाद जब साहित्य की विधाएं विकसित होती रही तब भी विद्वानों ने इन विधाओं को गेय रूप देकर उसका प्रभाव बढ़ाना चाहा। बाबा सूर कने जो साहित्य समाज को दिया उसे देखने से पता चलता है कि वे संगीत की लय–ताल से परिचित थे, जिस कारण उनके पदों को गायक विभिन्न गायकी का रूप देते रहे हैं। प्राचीन भक्त आचार्यों ने भक्ति के नौ साधन बताए हैं– श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पाद सेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य, लक्ष्य और आत्म निवेदन।[3] साहित्य और संगीत भक्ति के इन साधनों का बड़ा महत्व है। गेय साहित्य वास्तव में श्रवण योग्य हो जाते हैं। गेयता के महत्व पर पं. विष्णुनारायण भातरखण्डे का कहना था, संगीत के मूल तत्वों के आधार पर साहित्य को गाना चाहिए। वह जानते थे कि संगीत में सांसारिक जीवन का दिग्दर्शन कहाँ तक सम्भव है, इसीलिए उनका तर्क था कि रागदारी–गायन हर जगह उपयोगी नहीं हो सकेगा, लोकरुचि के अनुसार प्रचलित संगीत साधना होगा। राग एक सुगन्धित पुष्प के समान होता है। फूल की सुगन्ध से रस की निष्पत्ति नहीं होती परन्तु उससे मन को एक अवर्णनीय आनन्द अवश्य प्राप्त होता है। मन उत्तेजिज होता है, तल्लीनता व एकाग्रता होती है तथा उससे सब शक्तियों को गति प्राप्त होती है।[4] इस प्रकार हम समझ सकते हैं कि गेयता को सांसारिक दिग्दर्शन से जोड़ने के लिये प्रारम्भ से कार्य होते रहे हैं। प्रो. दशरथराज कहते हैं– ''मनुष्य अपने सम्पर्क में आने वाली हर वस्तु जड़–चेतन के रागात्मक सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है और करता है। अहं के इसी विस्तार अथवा अभिव्यक्ति के लिए मानव जड़ जगत को, अनात्म तत्व को भी माध्यम के रूप में अपनाता है। अहं की जो अभिव्यक्ति शब्द एवं अर्थ के माध्यम से होती है वही कविता है।''[5] इस पूरी यात्रा से होते हुए जब गेयता का अध्ययन किया जाए तो पता चलता है कि वेदों के बाद संस्कृत साहित्य में गेय काव्य की विशद परम्परा रही है। उड़ीसा के पुरी के मन्दिर में गीत गोविन्द को आज भी नियत समय पर गाया जाता है। उदाहरण के लिये भैरवी राग और रूपक ताल में गाई जाने वाले अष्टपदी की कुछ पंक्तियां–

रजनिजनित गुरुजागररागकशा वियतमलसनिमेषम्।
वहति नयन मनुरागमिव स्फुटमुदित रसाभिविवेशम।।

हरि हरि याहि माधव याहि केशव मा वद केतववादम्।
तामनुसर सरसी रुहलोघन या वत हरित विषादम्।।....."[6]

संस्कृत में गेय परम्परा के बाद हिन्दी साहित्य में इसकी जड़ें गहराई हैं। विद्यापति का तो कोई सानी नहीं है। भक्तिकाल में गेयता मानो छा गयी। जो कुछ कहा गया, लिखा गया, गेयतत्त्व से भरपूर था। इसमें सूर, तुलसी, कबीर के पद गेय काव्य के अन्तर्गत विशेष उल्लेखनीय हैं। इनका क्रम विभिन्न रागों के अन्तर्गत रखा गया है। वस्तुतः गीति तत्त्व समस्त प्रकार के काव्य में अन्तनिर्हित रहता है किन्तु हम जिस साहित्य को गेय काव्य के अर्न्गत रखते हैं उसमें आन्तरिक लय के साथ–साथ वाह्य लय का आयोजन भी रहता है।

प्रचलित संगीत में वैष्णव–सम्प्रदाय का उपकार रहा है। वैष्णव मन्दिरों में भगवान के जो लीला गान गाए जाते हैं एवं लीला गान की परम्परा दीर्घकाल से चली आ रही है इसने संगीत जगत को अमूल्य निधि दी है। प्रचलित होरी, ध्रुपद, धमार, ख्याल के पदों में यह परिपुष्ठ हो जाता है। इन पदों में सूरदास, कुम्भनदास, लक्ष्मनदास, परमानन्ददास इत्यादि भक्ति कवियों के ललित भाव से भरे हुए हैं। वैसे भी भक्त कवि, गायक भी थे। इनमें सूरदास के साथ ही रैदास, मीरा, गुरुनानक, दयाराम, तुकाराम, त्यागराज इत्यादि लम्बी श्रृंखला है। इनके अध्ययन व प्रयोग के बाद पता चलता है कि सूर के पदों में गेयता सहज बन पड़ी है। सूर के पदों का प्रचलन देख इसे 'सूर संगीत' के रूप में मान्यता दी जा सकती है। महाकवि सूरदास की रचनाओं में सबसे प्रमुख और प्रसिद्ध रचना 'सूरसागर' है। अन्य समस्त रचनाएं गौण हैं। 'सूरसारावली' 1107 पदों का खण्डकाव्य है, जिसमें भागवत की कथा को ही संक्षिप्त वर्णनात्मक रूप में दिया गया है। जो भी हो, सूर के तमाम पद गेय हैं। इनमें गेयता के लिये पर्याप्त स्थान है।

सूरदास के पदों की गेयता देखते हुए अध्ययन की दृष्टि से इन्हें इस प्रकार विभाजित किया जा सकता है– सामान्य चरित सम्बन्धी गेय पद, विशिष्ट क्रीड़ा सम्बन्धी गेय पद, रूप चित्रण सम्बन्धी, मुरली वादन सम्बन्धी, प्रभाव सम्बन्धी, भाव सम्बन्धी गेय पद। इनके अतिरिक्त अन्य पद भी किसी न किसी रूप में गेय हैं जिन्हें फुटकर गेय पद के रूप में समझा जा सकता है। सूर के पदों में गेयता जानने से पूर्व यह बात ध्यान देने की है कि सूरदास वास्तव में सफल गायक भी थे। मान्यता है कि मल्लाहों के प्रकार में राग 'सूर मल्हार' की रचना सूरदास ने की थी। पं. रामाश्रय झा 'रामरंग' ने सूर मल्हार के वर्णन में कहा है, ''महान संगीतज्ञ सूरदास जी के राग मल्हार को सूरदासी मल्हार भी कहते हैं।''[7] जिस प्रकार गायन चक्रानुसार विभिन्न राग गायन हेतु तय किये गये हैं और कुछ मौसमी रागों का विधान विद्वानों ने किया है। इन्हीं में मल्हार अंग के रागों को वर्षा ऋतु का बताया गया है। मियाँ मल्हार, मेघ मल्हार, रामदासी मल्हार, नट मल्हार, मीराबाई की मल्हार, चरजू की मल्हार, धूलिया मल्हार, रूपमंजरी मल्हार की तरह ही सूर मल्हार भी अपने प्रकार का एक आकर्षक प्रकार मल्हार अंग का राग है। इसके गायन का समय रात्रि का द्वितीय प्रहर है। ओमकारनाथ गौरीशंकर ठाकुर कहते हैं– ''सूर जैसे महान गायक–कवि की संगीत में अवतारणा करना परमावश्यक एवं परम कर्तव्य है। समान्य और विज्ञ, सभी की आत्मा उस दिव्य संगीत में अवगाहन कर सकेगी और विशुद्ध हो सकेगी।''[8] उनके पदों में सहृदयता और भावुकता के साथ चतुरता और वाग्विदग्धता भी है, जो काव्य भाव का उत्सर्ग उपस्थित करता है। साथ ही काव्य कला का सौष्ठव भी। अनुभूतियों की मार्मिकता के साथ–साथ उसमें अभिव्यक्ति का चमत्कार भी है। सूर का उच्च सीान केवल भाव पक्ष के कारण ही नहीं, कला पक्ष की महत्ता के कारण भी है। सूरदास के विनय भक्ति के पदों को उदारहण स्वरूप देख सकते हैं। इनमें मंगलाचरण, सगुणोपासना, भक्त वात्सल्यता, अविधा, माया, गुरु महिमा, नाम महिमा, विनती, भगवदाश्रय, भावी, वैराग्य, मन प्रबोध, चित्बुद्धि, सम्वाद, हरिविमुख–निन्दा, सत्संग महिमा, स्थितप्रज्ञ, आत्मज्ञान हैं। नाम महिमा के पद का उदाहरण प्रस्तुत है–

'बड़ी है राम नाम की ओट।
सरन गए प्रभु काढ़ि देत नहिं करत कृपा हैं कोट।
बैठत सबै सभा हरि जू की, कौन बड़ो को छोट?
सूरदास पारत के परसैं मिटति लोह की खोट।।'

रागात्मक विवेचन में अब प्रस्तुत है विनय भक्ति का एक पद की पंक्तियां जिसे राग यमन में निबद्ध किया गया है (यहाँ म को तीव्र म समझा जाए)–

चरन कमल बंदो हरि राई।
जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै, अंधे को सब कुछ दरसाई।
बहिरो सुनै, गूंगे पुनि बोले, रंक चलै सिर छत्र धराई।
सूरदास स्वामी करुणामय, बार–बार बंदौ तिहिं पाई।।

नि नि ध नि	म प ग म	प – रे म	ग रे सा –
च र न क	म ल बं ऽ	दो ऽ ह रि	रा ऽ ई ऽ
0	3	x	2
नि ध नि रे	ग ग – म	ध नि नि ध	नि ध प –
जा ऽ की ऽ	कृ पा ऽ पं	ऽ गु गि रि	लं ऽ घे ऽ
सां – सांनि रें	सां नि – म प	रे रे म ध	नि ध प –
अं ऽ धेऽ ऽ	को ऽ ऽस ब	क छु द र	सा ऽ इ ऽ
0	3	x	2

इसी प्रकार से सूर के पदों को कई प्रकार से राग–तालों में निबद्ध कर गाया जाता है। राग पहाड़ी पर तीनताल में स्वरलिपि सहित एक उदाहरण प्रस्तुत है–

अब हौं माया हाथ बिकानौं।
परबस भयौ पसू ज्यों रजु बस, भाज्यौ न श्रीपति रानौ।।
हिंसा–मद–ममता–रस भूल्यौ, आसाहीं लपटानौ।
याही करत अधीन भयौ हौं, निद्रा अति न अघानौ।।
अपने ही अज्ञान–मिमिर में, बिसरयों परम ठिकानौ।
सूरदास की एक आँख है, ताहू मैं कसू कानौं।।[9]

सा रे सा नि़	सा प म प	ग – सा सा	सा – सा –
अ ब हौं ऽ	ऽ मा या ऽ	हा ऽ थ बि	का ऽ नौं ऽ
2	0	3	x
सा रे सा नि़	सा रे ग रे	सा – सा सा	प – म प
अ ब हौं ऽ	प र ब स	भ यौं ऽ प	सू ऽ ज्यौं ऽ
ग म ग ग	सा ग – ग	म ग म ध	प – म प
र जु ब स	भ ज्यौं ऽ न	श्री ऽ प ति	रा ऽ ऽ ऽ
ग म ग –			
ऽ ऽ नौं ऽ			

सूर के पदों में गेयता अपूर्व है। शास्त्रीय राग–रागरियों के ठीक स्वर ताल उसमें प्राप्त है। सूर–सागर में इतने अधिक राग हैं कि उन्हें देखकर समस्त जीवन संगीत साधना में अर्पित कर देने वाले आज के संगीतज्ञों को भी दांतों तले उंगली दबानी पड़ती है।[10] बाल लीलाओं से लेकर जितनी भी रचानएं सूर ने की हैं वह तरह–तरह से रागों में गुंथकर गायी जाती रही हैं। कुछ इस प्रकार हैं– मैया मोहिं दाउ बहुत खिझायौ, मैया री मोहिं माखन भावै, पनघन पर रोके रहत कन्हाई, बाजत नन्द आवास बधाई, आवत मोहन धेनु चराए इत्यादि। सूर के श्रृंगार सम्बन्धी पद भी गेयता के लिये अनुपम हैं। संयोग व वियोग दोनों ही प्रकार के पद गेय तत्त्व से भरपूर हैं। 'सारावली' के छन्द संख्या 1012 से 1017 तक सोरठ, मलार, केदार, जैतश्री आदि विविध रागों नाम गिनाये गये हैं। जिन्हें शास्त्रीय संगीत कोई विशेषज्ञ ही समझ सकता है। 'सूरसागर' के पृष्ठ 352 पर संगीत के सप्तस्वरों के नाम दिये हैं।[11] उसके पृष्ठ 346 पर उपंग, ताल, मुरज, रबाब, बीना, किन्नरी, मृदंग आदि बाजों के नाम आये हैं।[12] अब प्रस्तुत है कृष्ण दर्शन का एक पद–

राधा तैं हरि हैं रंग रांची।
तो तैं चतुर और नहिं कोऊ, बात कहों मैं सांची।
तैं उनको मन नहीं चुरायो, ऐसी है तू कांची।
हरि तेरो मन अवहिं चुरायो, प्रथम तुहीं हे नाचीं।
तुम अरु श्याम एक हौं दोऊ, बाकी नाहीं बांधी।
सूर स्याम से रैं बस, राधा कहति लीक मैं खांची।।

अब प्रस्तुत है प्रातःकालीन राग भैरव पर निबद्ध एक रचना जिसमें कहा गया है– हे प्रभो! आपका नाम भक्तवत्सल है। अथाह जल के बीच ग्राह के हाथों से गजराज की रक्षा, ग्वालाओं के कल्याण के लिए गोबर्धन पर्वत को उठाया।.....

भक्त–बछल प्रभु, नाम तुम्हारौ।
जल–संकट तैं राखि लियौ गज, ग्वालनि–हित गोवर्धन धारौ।।
छुपद–सुता कौ मिट्यौ महादुख, जबहीं सो हरि टेरि पुकारी।
हौं अनाथ, नाहिन कोउ मेरौ, दुस्सासन तन करत उघारौ।।
भूप अनेक बंदि तैं छोरे, राज–रवनि जस अति बिस्तारौ।
कीजै लाज नाम अपने की, जरासंघ सौं असुर संघारी।।.....[13]

स्थायी

ग म प ध़	प म प ग	म – म प	म ग रे सा
भ ऽ क्त ब	छ ल प्र भु	ना ऽ म तु	म्हा ऽ रौ ऽ
0	3	ग	2

अन्तरा

प ध़ प ध़	नि नि सां –	सां रें सां रें	नि – सां सां
ज ल सं ऽ	क ट तैं ऽ	रा ऽ खि लि	यौ ऽ ग ज
सा रें गं मं	गं रें सां –	नि ध़ नि सां	ध़ – प –
ग्वा ऽ ल नि	हि त गो ऽ	व ऽ र्ध न	धा ऽ रौ ऽ

शेष अन्तरे इसी प्रकार गाए जाएंगे।

संगीतज्ञ डॉ. विशवम्भर नाथ भट्ट कहते हैं– ''सूर ने कृष्ण के साथ अभिन्न हृदय मित्र का नाता जोड़ लिया था, फलतः उन्हें आत्माभिव्यक्ति की सुविधा कुछ अधिक मिल गई थी। साथ ही यह बात भी विचारणीय है कि जब भक्ति का आलम्बन सीता राम होते हैं तब भक्ति भावना में मर्यादा का जो पुट मिलता है, वह राधा कृष्ण की भक्ति में तिरोहित हो जाता है। सूर, बल्लभाचार्य की कृपा से पुष्टिमार्ग में दीक्षित हो गये थे अतः उनकी भक्ति का स्वरूप ही सर्वथा भिन्न था। इसलिये सूर की वैयक्तिक रागात्मकता अपेक्षाकृत अधिक विशद रूप से हमारे सामने आती है।''[14]

इस प्रकार रागात्मक विवेचन से पता चलता है कि आधारभूत दस रागों के अलावा तमाम प्राचीन व नवीन एवं अप्रचलित रागों में सूर के पद गाये जाने योग्य हैं। विनय भक्ति से लेकर कृष्ण लीला, श्रृंगार– संयोग वियोग के पद, भ्रमर गीत सभी में गेय तत्त्व हैं। सूर के पदों की गेयता को दखते हुए उन्हें भारतीय शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत व सुगम संगीत में महत्व मिला है। सूर के पदों में कवित्व संगीत का दास नहीं है, संगीत कवित्व का सहायक बनकर आया है। इनका शब्द सौन्दर्य, प्रभावमयिता, सहजता है ही ऐसी कि इसे 'सूर संगीत' कहा जाना चाहिये। इससे संगीत जगत में अभिवृद्धि हुई है।

सन्दर्भ–

1. 'अथ खलु य उद्गीथः स प्रणवो यः प्रणवो स उद्गीथ इत्यतौ वा आदित्य उद्गीथ एष प्रणव ओमिति हवेष स्वरन्नेति।' –द्यान्दोग्य उपनिषद
2. आजकल (मई 1953) से
3. श्रवंणम् कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवन्।
   अर्चनं दास्यं सख्यमात्मानिवेदम्।। –भागतव 7:5:23, 24
4. क्रमिक पुस्तक मालिका, सम्पादक– लक्ष्मीनाराण गर्ग
5. सूर साहित्य विमर्श, प्रो.दशरथराज

6. गीतगाविन्दकाव्यम् : महाकवि जयदेव विरचित।
7. अभिनव गीतांजलि, पं.रामाश्रय झा 'रामरंग'
8. सूर संगीत, रचयिता डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग, संगीत कार्यालय हाथरस यूपी की भूमिका में ओमकारनाथ गौरीशंकर ठाकुर।
9. सूर संगीत, रचयिता डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग, संगीत कार्यालय हाथरस, पृष्ठ– 28–29
10. सूरदास, सम्पादक डॉ. हरवंश लाल शर्मा
11. सूरसागर, ना.प्र.स. पद संख्या 1769
12. सूरसागर, ना.प्र.स. पद संख्या 1677 और 1698
13. सूर संगीत, रचयिता डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग, संगीत कार्यालय हाथरस, पृष्ठ– 142–143
14. संगीतिका, त्रयमासिक पत्रिका प्रथम अंक मई 1970, सम्पादक हरिश्चन्द्र श्रीवास्तव, प्रकाशक संगीत सदन साउथ मालका इलाहाबाद–1, में डॉ.विश्वम्भर नाथ भट्ट का लेख– 'गीति काव्य में सूर, तुलसी और मीरा', पृष्ठ– 9

Creative Commons (CC) License
This article is an open access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY 4.0) license. This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.